समर्पण ।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"

माता

भारतभूमि

के

चरण कमलोंमें

आन्तरिक, श्रद्धा, भक्ति

और

प्रीतिके निदर्शन स्वरुप

लेखककी प्रथम पुस्तक

"महाराणा प्रतापसिंहकी वीरता।"

सादर समर्पित।

१९०७

"नरक-राज वरु होय प्रभु, नहीं स्वर्ग—दासत्व।
पराधीन है जगत में, अतिशय दुःख कर तत्व॥"

(माणिक)

रण-भेरी

दमामा सनाई बजावो बजावो ।
अरे रागमारू सुनावो सुनावो ॥
सबै फौज आगे बढ़ावो बढ़ावो ।
अरे जय-पताका उड़ावो उड़ावो ॥
कहां वीर हो वेगि धावो सुधावो ।
अरे वीरताको दिखावो दिखावो ॥
अरे म्यान सो शस्त्र खोलो सुखोलो ।
अरे मार मारो धरो मार बोलो ॥
अरे शत्रुको सीस काटो सुकाटो ।
अरे कायर दौरि डाटौं सुडाटो ॥
निसाना सबै लै उड़ावो उड़ावो ।
अरे लै बन्दूकैं चलावो चलावो ॥
सबै युद्ध भारी मचावो मचावो ।
अरे शत्रु सैनें भगावो भगावो ॥

(भारतेन्दु हरिश्चन्द्र)

महाराणा

प्रतापसिंह की वीरता ।

[हरिदास माणिक लिखित]



दाम दो आना =)

प्रथम बार १०००

" सूरज शशि वरु जाय टर, टर जावे संसार ।
पै व्रत से परताप कर, टरै न वीर विचार ॥ "
(माणिक)

सिद्धेश्वर स्टीम प्रेस - बनारस ।

भूमिका ।

सज्जन-चरित सिखाते-हमभी
कर सकते हैं निज उज्जवल ।
जगसे जाते समय-रेतपर;
छोड़े चरण-चिन्ह निर्मल ॥
चरण-चिन्हको देख कदाचित्त—
उत्साही होवें भाई ।
भवसागरकी चट्टानों पर—
नौका जिनकी टकराई ॥

(लक्ष्मी नारायण)

१—यों तो इस संसारमें मनुष्य जन्म लेकर मरते जीते हैं ही, पर, जन्मलेना उसी पुरुषका सार्थक होता है जो पर उपकारमें अपने शरीरकी आहुति दे दे; पर मुख्यकर जननी जन्मभूमिके लिए जोपुरुष अपने शरीरका दान रणगंगामें दे देता है, वह जन-समूहहोंमें नहीं वरन देवताओं में भी उसका मान अधिक होता है क्योंकि उन्हीं शूर वीरोंके विषयमें महात्मा तुलसीदासने सत्यही कहा है "तप व्रत योग याग आचरहीं । इनसो वीर परमगति लहहीं ॥" क्योंकि जिस समय अभिमन्यु, कर्ण, दुर्योधन, दुशासन आदि छः रथियों से लड़ते २ स्वर्गलोक सिधारा, उस समय उसकी माता अति विकलहो, अति आर्त्तनाद स्वरोंसे विलाप करनेलगी अभिमन्यु की माताको अति अधीर जान व्यासजी स्वयं आकर समझाने लगे—"पुत्री शोक मतकर; क्योंकि कोई दीन शूरमहात्मा, कठिन तपस्या करनेवाला तापसी; शुचि ब्राह्मण इनतीनोंकी अपेक्षा

रणयज्ञमें निज शरीरोंकी आहुति देनेवाला शूरवीर स्वर्गमें अतिमाननीय हैं—शूरवीरों को उत्तम गति मिलती है।"

२--परमात्माकी बनाई हुई इस विचित्र भूमिपर कतिपय प्रकारकी वस्तुयें देखनेमें आतीहैं, जिनको अवलोकन कर यह चंचल चित्त चकित होजाता है। संसारमें नाना प्रकारके पुरुष होतेहैं। कोई धनीहै तो कोई निर्धन; कोई कुशाग्र बुद्धिवाला, कोई महा मूढ़; कोई चिररोग ग्रसित है तो कोई स्वास्थ्य युक्तहै। कोई साधू है तो कोई दुराचारी; कोई शील स्वभाववाला है तो कोई महा क्रोधी; परन्तु इनसब भांतिके पुरुषोंमें प्रथम और उच्चगणना उसीपुरुषकी होती है जोकि जननीजन्म भूमिके लिये अपनेको अर्पण कर देता है। मातृऋणसे उऋण होनेकेलिये अपने देहों की आहुति तिलके सदृश-रण-यज्ञमें देदेता है। पाठक गण! आज मैं एक महारणधीर पुरुषके जीवनीकी एकही घटनाको केवल उपस्थित करूंगा। राजस्थान केशरी महाराणा प्रतापसिंहने किसप्रकार महान क्लेश उठाकर जननी जन्मभूमिकी सेवाकीहै सोभारतवासियों से छिपी नहीं है। हाय! उनके हृदय विदारी दुःखोंका स्मरणकर कौन ऐसा भारतवासी होगा जो उनकेलिये रोमांचित हो दो बूंद आंसू न गिरायेगा। पुरुष वही वीर है जिसकी शत्रु प्रशंसाकरे, अकबरने स्वयं प्रतापकी इसप्रकार बड़ाईकीहै--"वाहरे प्रतापसिंह मैंनेभी बहुतसी तवारीखें देखी मगर तेरे बराबर बहादुर न पाया। शाबास! गजब का बहादुर और गज़बका जफ़ाकश है। शाबास है तेरी दर्यादिली और बहादुरी को! अफ़रीं है तेरे हुब्बेवतनी और बेदारमगजीको--क्या दुनियामें ऐसे लोगभी हैं।"

३—पाठकगण ! यह वीर पुरुष वन वन घूमा जंगल २ फिरकर अपनेको पहाड़के कन्दराओंमें छिपाया; लड़कों बालों की भूखा रक्खा और स्वयंभी भूखा रहा, पर अकबरकी अधीनता इस वीर पुरुषने स्वीकार न की। पाठकगण ! प्रतापके एक अतिशय हृदयविदारी क्लेशको सुनाकर मैं अपनी भूमिकाका अन्त करताहूं। एक दिवस दिनभर न इनके कुटुम्बकोही खानेको मिला और न लड़के बालों और स्वामिभक्त सरदारोंकोही; सन्ध्याके समय कुछ भील "मीना"घास खोजकर लाये और प्रतापकी स्त्री पदमावतीके सन्मुख रखदिया। पदमावतीने आंसू पोछते२ उसको कूट बीनकर पिसानकी तरह बनाया और उसमें कुछ धूर मिलाकर रोटी बनाई। रोटी बनानेके उपरान्त सब सरदारगण पत्थरकी चट्टानोंकी थाल बनाकर एक संग बैठगये। एक ओर भीलसरदार चारपांच भीलों के संग बैठगया। रानीने सबको पारी २ रोटी दी। सबने भूखमें वही आधीघास और धूरकी मिली हुई रोटी खाई। लड़के भी खा चुके, पर प्रतापकी लड़की आधेही पेट खाकर आधी रोटी लेजाकर चट्टानके दरारमें रखआई। थोड़ीदेरके उपरान्त एक बन-बिलाव आकर उस रोटीको उठा लेगया। अपनी रोटीको इसप्रकार जाते देखभूखी बालिका चिल्ला उठी और अति कातर स्वरसे रोने लगी। बहुत पूछनेपर उसने कहा मेरी रोटी एक बन-बिलाव उठालेगया पर मैं अभी भूखीहीहूं।" यह कह भूखी बालिका पुनः रोने लगी।" प्रतापका हृदय समुद्र जो हिमाचलकी नाईं स्थिर था वह सहसा उबल उठा, चिल्लाकर कहने लगे-"हाय आज मेवाड़के राणाकी यहदशा हुई, कि उनकी अभागी सन्तानको घासकी रोटी भी नहीं प्राप्त होताहै। हे ईश्वर ! हमने ऐसे कौनसे

पाप किये हैं जिसके फल आज भुगतने पड़ते हैं। प्रभु हो ! क्या मैं जो इस आर्य भूमिकी रक्षा और गौरव बढ़ानेके लिय इतने कष्ट उठा रहा हूं वह तुम्हे नहीं रुचते ? मालूम हुआ तुम्हारा कोप इस अभागे देश पर है इस कारण अपनी इच्छाके विरुद्ध काम करते देख तुम इतना हमारे पर रुष्ट हो, इस कारण हमारे सब कामोंमें विघ्न डाल रहे हो। बन्धु, बान्धव, भाई, सरदार, मित्रादिक सभी क्रमशः मारे गये और आज यह दशा हुई है कि बच्चोंको घासकी रोटियां भी नहीं मिल रही हैं। हे करुणाकर ! मैं तुम्हारे विपरीत चल रहा हूं पर इन अनाथ बालकोंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो इनपर भी दया नहीं करते हाय ! समस्त देश अकबरके आधीन होता जाता है। राजा लोग प्राणदण्डके भयसे "जो हुजूर" कर रहे हैं। किसी को अपने भाईकी सुधि नहीं है। "अपने तो मौज करलें फिर देखा जायगा, मुझसे औरों से क्या मतलब" इत्यादिक बातें कह अपनी नामर्दी दिखा रहे हैं। हाय ! प्रताप यदि सभी दास कहानेमें अपनी बड़ाई समझते हैं तो तू क्यों वृथा लड़कर इन बालकोंको दुःख देता है। हाय ! मेरा हृदय हिमालयके सर्वोच्च शिखर परसे गिराये जानेकी चोटको सह सकता है; बड़े २ बम्मके गोले, गोली, तीर कमठा, और फरसों की चोट को सहर्ष सह सकता है पर इन बच्चोंके दुःखोंको नहीं सहा जाता है। (उन्मत्तहो कर) यदि नहीं सह सकता तो क्या तू दास होगा ? अरे ! ईश्वर ! ! यह क्या सांप छछुन्दर की गति किये हो। नहीं २ मैं दास कभी नहीं हूंगा, एक नहीं सहस्रों पुत्र सन्मुख काटे जावें, पर प्रताप **दास** होने का नहीं। क्योंकि हमने अपने सरदारों से क्या प्रतिज्ञा की हैः—

———

अन्नादिक भी मिले नहीं तो भूखा रहकर।
पूजूं मैं "स्वाधीन देवि" को सब दुख सहकर॥
वृक्षछाल भी मिले नहीं तो मिट्टी खाकर।
करूं मुक्त मैं मातृ भूमिको अलख जगा कर॥
चुवै अनल कणचन्द्र अमृत विषहू हो जावे।
टूटे नखत दिवाकर यद्यपि शीतल होवे॥
गौरि-शम्भु-तन अलग होय पत्थर घुल जावे।
जल में धूं धूं आग लगे अमरहु मर जावे॥
तजै सिन्धु मरजाद, अचल मेरु गिरि चल्लै!
शेष नागके सिरसे चाहे पृथ्वी ट्टल्लै॥
उलटि गंग बरु बहै, कामरति प्रीति बिनासै।
चाहे जल बिन हीन मीन पृथ्वीपर वासै॥
नहिं बन्दि हो रहै दास नहिं बनै प्रतापा।
साधु बेष में बन बन फिर कर करै कलापा॥

(श्री हरिदासमाणिक।)

इसी प्रकार राणाप्रतापसिंहको विलाप करते, प्रतिज्ञा करते घूमते घामते जंगलमें पचीस वर्ष व्यतीत हो गये पर अकबरके दास नहीं कहाये और अन्तमें विजयी हो अपनी मातृ भूमिका उद्धार भी किया। ऐसे वीर धीर साहसी पुरुषका कौन आदर नहीं करैगा; कौन उसको क्षत्रियोंमें क्षत्री नहीं समझेगा?

५ सन १५९६

४—इस वीर पुरुषकी मृत्यु संवत १६५३ में हुई। मरते समय राणाके प्राण, पुत्र अमरसिंहके शोकमें नहीं निकलते थे, क्योंकि कुमार अमर अति असावधान और चंचल था। मृत्यु-शय्यापर पड़े २ कहरते देख एक सरदारने पूछा—"अन्नदाताजी!

इतना कष्ट क्यों है । तब राणाने धीरेसे उत्तर दिया-सरदारों मुझको कष्ट इसीलिए हो रहा है, कि पुत्र अमर अकबरकी दासता स्वीकार कर लेगा, और इन जंगलों में बड़े २ महल और राज प्रासादिक निर्माण किये जायेंगे। यदि तुम लोग तलवार लेकर शपथ खाओ कि जब तक तनमें रक्तका एक बूंद भी उपस्थित रहेगा तब तक अमरके लिये लड़ूंगा और लड़ाऊंगा" प्रतापके इन वाक्योंको सुन सब सरदारोंने तुरतही तलवार उठाकर शपथ खाई । सरदारोंके सपथ खातेही प्रतापके प्राणपखेरू तन रूपी पिंजरसे उड़गये। इस प्रकार इस वीर पुरुषकी जीवनी अनेक कष्टोंको झेलकर समाप्त हुई पर मातृभूमिके लिये सब दुःख सहर्ष सहलिये। अहा ! प्रताप जो तूने भारीसे भारी क्लेश उठाकर स्वाधीनताका वट-बृक्षहम भारत वासियोंके लिये बोया है वह कदाचित् एक दिवस अति विशाल बृक्ष होकर सहस्रों थकित और नामर्द पथिकोंको सूर्य्यकी प्रचण्ड किरणोंसे बचावेगा। भूमिका के अन्त में मैं "हिन्दी केसरी" के लेखक पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्लको हृदयसे धन्यबाद देता हूं; जिन्होंने मेरे लेख और कविता दोनोंको निज पत्रमें छापकर उत्साहित किया है।

९४ पिश्रपोखरा
काशी
ता: २२ दिसम्बर सन् १९०७ ई०

हिन्दी रसिकोंका सेवक
श्रीहरिदास माणिक ।

❀ महाराणा ❀

प्रतापसिंह की बीरता।

श्रावणका महीना है, दिन के चार बजनेका समयहै, काले २ डरावने बादलोंकी ओटमें आकर सुर्यभगवान दिनको रात्रिबनारहेहैं। केवल कभी कभी अपना मुँह दिखलाते और अपने विद्यमानहोनेकी सूचना देनेके लिये, चञ्चल युवती की भाँति बादलों की खिड़कियोंमेंसे क्षणभरके लिये गर्दन निकाल देतेहैं। परन्तु बादलोंको उनकी यह स्वंतन्त्रता पसन्द नहीआती। इसलिये वे तुरन्त ही फिर उनको ढाँक देते हैं। कभी कभी बिजली भी चमककर अँधेरेका उजेला बना देती है और लोगोंकी आंखोको चका चौंध करने में अपनी शक्ति और पराक्रमका नमूना दिखारही है। उष्णकालकी प्रचण्ड गरमीसे दुःखित और प्यासी भूमि वर्षाका पानी पीकर ऐसी प्रसन्न होरही है, कि कुछ कहा नहीं जाता। केवल इतना ही नहीं वरन लालचके मारे उसने इतनाअनाप सनाप पानीपीलिया कि, पेटू मनुष्योंकी डकारोंकी तरह उसमेंसे जगह जगह पानी बुल बुल करके निकल रहा है। स्थान स्थानमें लबालब भरीहुई तलाईयोंमेंसे निकलकर हरियालीकी ओर जाता हुआ पानी प्रेमकी विचित्र गतिका नमूना दिखारहा है। जहँातक दृष्टि पहूँचती है सिवाय हरियालीके और कुछ भी नही दिखाई देता। उसके ऊपर बीच बीचमें लाल, पीले काले श्वेत और मिश्रित रङ्ग बिरङ्ग,

अनेक प्रकारके मनोहर फूल विचित्रही शोभा देरहे हैं । जिन्हें देखनेसे यह प्रमाणित होताहै कि उस सर्वशक्तिमान विधाता ने दुःखी जनोंके चित्तको शान्त करनेके लिये यह विचित्र मनोमोहन उपवन बनाकर अपनी अद्भुत और अद्वितीय बागवानीका नमूना दिखायाहै । ग्रीष्म ऋतुके प्रचण्ड मार्तण्डकी असह्य तीव्रकिरणों से दग्ध और बृद्धावस्थाको प्राप्त बृक्ष आज बर्षाकालकी कृपासे हरे हरे पत्तोंकी पगडी तथा वैसेही वस्त्रोंसे आच्छादित होकर युवाबन गये हैं और अपने ऊंचे२मस्तकोंको उठाकर नील नभसे वार्तालाप करना चाहते हैं । एक ओर कल कल शब्द करके नाले का पानी बहरहा है, दूसरी ओर मन्द२ गतिसे सरर शब्द करके शीतल वायु बहरहा है, तो तीसरी ओर पत्तोंका चर चर शब्द होरहा है, और पक्षीगण ऊंचे ऊंचे बृक्षोंकी चोटियों पर बैठे हुए चकचकाहट मचारहे हैं । उनकीओर दृष्टि देने से यही प्रतीत होता है कि मानों सब मिलकर एक स्वरसे उनको ग्रीष्म ऋतुमें दुःखित करने वाले सूर्यके अस्ताचलको जाने और पावस ऋतुके आगमनसे प्रसन्नताके मारे गान कर रहे हैं और बधाई दे रहे हैं । दिनभरके थके हुए सूर्यदेव भी अस्ताचलको पहुंचते पहुंचते आकाश मण्डपको अपनी मन्द पड़ी हुई किरणोंके द्वारा लाल पीले रङ्गसे रङ्ग कर मानों अपनेसे दुःख पायेहुए जीवों और बृक्षोंको प्रसन्न करनेके लिये महफिलकी परीछटा बनानेका प्रयत्न कर रहे हैं और ऊंचेबृक्षोंको अपनी किरणोंसे, लाल पगड़ी बँधाकर उनके दिलसे अपनी ओर का द्वेष दूर करना चाहते हैं । भूमिने हरे रङ्गका फर्स बिछाकर उसपर स्थान स्थानपर फूलोंके सुन्दर गमले रख दिये हैं । सूर्यदेवने आकाशमें रङ्गीन बादलोंसेमण्डप बनादियाहै,बिजली अपनी गहरी

चमक दमकसे खूब प्रकाश फैलारही है। बादल गर्जना करकेनक्कार बजारहे हैं और चिड़ियां आल्हादित हो अपरिवर्तित स्वर मधुरगान गा रही हैं। इसीतरह आज पावस ऋतुकी पूरी सभा जमी हुई है और इन्द्रदेवताभी समय समयपरवर्षाकी बून्दे डालकररङ्गवर्षारहेहैं

२–इस समयका दृश्य देखकर प्रत्येक मनुष्य वा जीव विना आनन्दित हुए नही रहता। कोई कैसाही दुःखी क्यों न हो ऐसे आनन्द और हर्ष के समय में उसका भी चित थोड़ी देरके लिये प्रसन्न हुए विना नहीं रहता, वह भी एकवार परमात्माकी विचित्र कारीगरी और उसकी लीलाकी प्रशंसा किये विना नही रह सकता परन्तु यह कहावत भी है कि 'जो बात एकको प्रसन्न करने वाली होती है वही दूसरे को दुःखदाई होती है,। ठीक इसी का उदाहरण हमारे आखों के सन्मुख इस समय आरहा है एक अतिशय विशाल पर्वत की गुफा में एक पुरुष अपने लडके वालों के संग बैठे हुए कुछ सोच रहा है। उसीके बगलमें एक सुन्दरी भी गर्दन पर अपना हाथ धरे कुछ सोचरही है। उसकी ओर देखने से स्पष्ट यही प्रतीत होता है कि उसको अवश्यही किसी हार्दिक पीड़ा और सोचने सता रक्खा है, पीड़ा क्यों न हो, स्वामीका दुःख क्या स्त्रीका दुःख नही कहा जासकता। पाठकगण! आपलोग इस बात कों जानने के लिये अति उत्सुक होंगे कि यह दम्पती हैं कौन। पाठकगण! यह वही प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रतापसिंह हैं जो कि स्वतन्त्र देवीकी उपासनामें, अपने बाल बच्चों सहित अन्न पानी विना एक निर्धनकी तरह इधर उधर घूमरहे हैं। हाय! एक समय इन्हीं मेवाड़ाधिपतिकी विमल पताका गगनभेदी हो शत्रुओंके हृदय

को विदीर्ण करती थी, पर हा ! आज वही कालकी कराल गति से एक पर्वत-कन्दरामें भी नही चमकती है। विशाल मेवाड़-राज्य प्रतापसिंहके हाथ से जाता रहा। जितने नगर विशाल दुर्गम दुर्ग और पर्वतादिक थे वे सब खो बैठे। आश्रमहीन, धनहीन, बल हीन, सैन्यहीन, अन्नहीन होकर, प्राण दुःखी, जीवन चिन्ताकुल और हृदय विषादसे परिपूर्ण हैं। सुख, आशा, शान्ति और भरोसा कुछ भी न रहा। रहा तो केवल स्वदेश प्रेम, मानसिक कल्पना, और अपूर्व आत्मसंयम।

३—राजाओं को सन्तान, स्त्री, पुत्र, कन्या, भाई, बन्धु के होंने से अतिप्रसन्नता रहती है पर यहां पर कुछ विपरीतही समय है उनकी छोटी सन्तान और अभागिनी रानी पद्मावती, उनके लिये काल स्वरूप है। उधर विजयी मुगलों में से एक पीछे से हुङ्कार मार रहे हैं, दूसरे रात दिन उनका पीछा कर रहे हैं, तीसरे उनको पकड़ने के लिये अनेक उपाय रच रहे हैं। इधर ये अभागे जीव रात दिन “ हाय ! हाय ! ” करते, गले लिपटते, उनके पीछे पीछे फिर रहे हैं। वस्त्र और भोजन की अवस्था इन लोगों की अति शोचनीय है। बल्कि एक भिक्षुक इन लोगों की अपेक्षा सहस्र गुना अच्छा है। कुटुम्ब-दुःखसे प्रतापसिंहका हृदय-समुद्र, आजकल जिस प्रकार उबल रहा है इसका अनुमान केवल वेही कर सकते हैं। सचमुचही आभागा परिवार ही आजकल प्रताप सिंहका काल बना है। “ उनको कहां रक्खें; उनके भोजन के लिये क्या उपाय करें।” इसी शोच में प्रताप सिंह डूब रहे हैं। इसी शोच विचार में वे प्रतिक्षण मग्न रहते हैं, तिसपर भी दो घड़ी निश्चिन्त होकर एक स्थान में नहीं रहने पाते। यदि एक स्थान

पर जपकर रहना होता तो भी भला कुछ भोजनके सामान इकट्ठे होजाते पर बेचारे इससे भी वे वञ्चित थे। आज यहां हैं, तो यह निश्चय नहीं कि कल कहां कितने कोसों पर जङ्गल काट कर बैठने योग्य स्थान निकालना पड़ेगा। कल कैसा यह भी स्थिर नहीं कि खाया यहां है तो हाथ कहां चलकर धोना पड़ेगा "ये आये; वे गये; इसे पकड़ा, उसे मारा, परिवार का सम्भ्रम नष्ट किया।" रात दिन इसी कांयकांयके मारे वे अधीर हो कभी कभी अति दुःखित हो कातर स्वरसे चिल्लाने लग जाते थे।

४-मुगलोंके सहसा आक्रमण से और परिवारके हृदयविदारक असह्य दुःखसे प्रतापने समझलिया, कि विधाता अब सचमुचही मुझसे रूठा है। उन्होंने समझ लिया कि अभागा कुटुम्ब ही उनका व्रत भङ्ग करेगा। दुःख निराशा ओर दुःश्चिन्ताके मारे उनकी आखोंसे रक्त टपकने लगा। भाग्यवश जैसा प्रताप ने शोचाथा वैसाही हुआ, धीरे धीरे प्रतापसिंह और उनके परिवारका दुर्भाग्य अपनी अन्तिम सीमा पर जा पहुँचा। अबतो सारा दिवस व्यतीत हो जाता परन्तु रूखे सूखे भी भोजन न प्राप्त होते थे। सङ्गमें जितने साथीथे उनमेंसे बहुतोंने संगछोड़ दिया। सबने अपनेअपने घरकी राह ली। कुछ थोड़े से स्वामिभक्त सेवक दिनभर महाकष्ट उठा कर कुछ न कुछ थोड़ा बहुत ढूँढ़ढार कर राजा ओर उनके कुटुम्बोंके लिये लेआते; महाराना प्रतापके कुटुम्ब उसीसे अपना निर्वाह किया करते थे। परन्तु अब हाय! उसका भी ठिकाना नहीं मोगल समस्त अरावलीको पात पात कर खोजते फिरते थे। "कहां है काफिर प्रताप! कहां है उसका परिवार।"

५-राज राजेश्वर प्रतापसिंह आज भिखारी भेषमें स्त्री, पुत्र, कन्याका हाथ थांभे हुए वन, बन, पर्वत, पर्वत, कन्दरा, कन्दरा,

भटकते फिरते हैं। समस्त दिन घूम घाम कर बड़े कष्टसे बीने बटोरे हुए कुछ कसैले बनफलों से, एक पेड़ के नीचे अथवा पर्वतकी कन्दरा में बैठकर पेटकी ज्वाला बुझाना चाहते हैं कि इतनेहीमें एक सङ्गी सरदार अथवा भक्त भील आकर समाचार देता है कि—" महाराणा भागिये, भागिये ! सैकड़ों मुगल सिपाही इधर आ रहे हैं—उनको किसीतरह खबर लग गयी है कि आप परिवार समेत यहां आराम कर रहे हैं। तुरत अधखाये फलोंको छोड़कर स्त्री, पुत्र, कन्याका हाथ पकड़, लम्बेर कदम भरते हुए मेवाड़पति छिपी राहसे निकल कर दूसरे दुर्गम और निर्जन बनमें जाकर छिपरहते हैं किसी किसी दिन भयङ्कर गुफामें सपरिवार सारे दिन भूख प्यासे पड़े रहतेहैं। भूख के मारे भूखी संतान व्याकुल होरही है, प्यास के मारे गला सूखा जारहा है, कान लगाये पैरकी आहट ले रहे हैं कि कहीं कोई सेवक कुछ फल मूल और जल लेकर तो नहीं आरहा है । इतनेहीमें एक भील कोई शिकार और बनतुम्बीमें जल लेकर आता है उसको देखतेही राजदम्पती कृतज्ञता पूर्वक मनहीमन उसको आशीर्वाद देने लगते हैं। तबउसी गुफामें पत्ते, तिनके लकड़ी बटोर आगजलाकर उसको भूनतेहैं। अन्नकातो नाम नही केवल मांसही उनका आधार है। महारानी सन्तानको खिलाकर ज्योंही वह सूखा मांस राणाके सन्मुख रखना चाहती हैं कि त्योंही "दीन दीन" चिल्लाते हुए सैकड़ों मुगल चारों ओर आकर उनको घेर लेते हैं। भूख प्याससे व्याकुल राजदम्पती मांस और जलको फेंक कर तुरन्त उन निर्बल बच्चोंको उन्हीं बे धोये हाथों से उठाकर किसी राहसे गुफाके भीतरही भीतर, दूसरी गुफामें जाकर अपनी स्वाधीनता बचाते हैं।

उधर कुछ देरतक "हाय हूय काफिर कहां गया, मारो, धरो, पकड़ो" कहके मुगलगण सूखे हाथां वहां से चलेजाते हैं। ऐसी घटनायें केवल दोहीचार बार नहीं बरन अनेकवार संघटित हुई। हार्दिक दुःख, शारीरिकक्लेश, पेटज्वाला, तीनोंने अपना कोप पूर्ण रूपसे दिखलाया। इन तीनोंने मिलकर एक भयङ्कर अग्निकुण्ड निर्माण किया। उस अग्निकुण्डकी प्रचण्ड ज्वालासे महाराणा दिनरात जलने लगे। दिन पर दिन, मास पर मास, साल परसाल बीतने लगे। एक ऋतु बीती दूसरी आयी, दूसरी बीती तीसरी आयी, इसी प्रकार धीरे धीरे करके अनेक वर्ष व्यतीत हो गये; परन्तु प्रतापसिंहके हृदय विदारक दुखके दिवस न बीते दुख धीरे धीरे बढ़ताही गया दरिद्रता अनेक प्रकारसे अपनी भौंहैं टेढ़ी करके डराने लगी। मायाके गृह नयनों के तारे-दूध पीते बालक भूखसे व्याकुल होकर प्रताप सिंहके गले लिपट कर रोने लगे, इस प्रकारके अनेक हृदय विदारक और असह्य दुख महाराणाप्रतापसिंह के सन्मुख उपस्थित हुए। पर वीर प्रतापने अपना व्रत न छोड़ा। स्वतन्त्रदेवीकी उपासना में दानके सदृश व्रती रहे। बिना खाये, बिना सोये, रातदिन शोचबिचार करते उनका कलेजा सूख गया, पर वीर प्रताप ने तिसपरभी अपना मस्तक यवनोंके आगे न झुकाया।

६—एक दिवस राणाने छोटा सा दर्बार किया, गुफाहीमें राज सरदार लोग उपस्थित हुए। भीलोंके मुख्य मुख्य सरदार सेना नायक भीआये। उस समय राणा का चित अति दुखित हुआ पर धीरज धर बोले "मेरे प्यारे सरदारो! मेरे कारण तुमलोगों को बड़ा क्लेश उठाना पड़ा है। आहा! कहां तुम लोग राजप्रासाद के

रहनेवाले राजसुखसे सुखी और कहां कण्टमय मरु देश, पहाड़ोंका घूमना, चट्टानोंपर सोना, उसपर भी स्वच्छन्दताकी नींद नहीं। यदि एक स्थानपर जमकर रहना होता तो भी भला कुछ आराम के समान होजाते पर यहांतो उसकाभी ठिकाना नहीं। आज यहां हैं तो यह निश्चय नहीं कि कल कहां कितने कोसोंपर बैठने योग्य स्थान निकालना पड़ेगा-कलकैसा! यह भी तो स्थिर नहीं कि खाया यहां है तो हाथ कहां चलकर धोना पड़ेगा-अहा! जहां सहस्त्रोंको भोजन देकर भोजन करते थे, वहां अब अपने बच्चोंके पेट भरनेके लिये लालायित होना पड़ता है; बहादुर भाइयों! जो तुमने भी आज यवनोंका दासत्व स्वीकार किया होतातो इन ऊभड़ खाभड़ और अतिशय हृदय विदारक शिलाखण्डोके बदले रत्न खचित सिंहासनोंपर विराजमान होते। बड़े बड़े अभिमानी नरेश तुम्हारे चरणों पर अपने मुकुट छुलाते, संसारकी यावत सुख सामग्री तुम्हारे सन्मुख हाथजोड़े खड़ी रहती और जो कहीं राज महलोंमें अपनी बहिनोंको पहुंचाये होते, तबतो फिर कहनाही क्या था जहां दिल्ली पहुंचते कि तुम्हीं तुम दिखाई देते पर हाय! मैं क्या करूं मेरी मोटी बुद्धि इन क्षणिक सुखोंकोसुख करनहीं मानती। मैं गँवार पुरुष हूं, मुझे इन दुर्गम जङ्गलोंका वास उन राज महलोंसे कहीं बढ़कर सुखद जान पड़ताहै। अहा! हमारा हृदय मन्दिर जो कि पवित्र आर्यगौरववासनासे परिपूरित है, इन बाहरी शोभाओं से मोहित नहीं होता, मैं क्या करूं, मेरा मन उन सुखद सामग्रियोंको दुःखद करके मानता है; परन्तु तुम लोग क्यों मेरेलिये कष्ट उठाते हो अपने अमूल्य जीवनको क्यों व्यर्थ गँवाते हो? मुझे यहीं यहां भटकनेदो न, तुम लोग अपने कामोंको देखो हम तुम लोगोंको सुखी देखकर सन्तुष्ट होंगे।

७-इसी भांति राणाने सबको अनेकप्रकारसे सिखाया और समझाया कि उनमेंसे कुछ चले जांय पर फल विपरीतही हुआ। एक सरदार जो कि अति वीर तथा राणाका सच्चा भक्त था, तलवार फेंककर कहने लगा "महाराज! यह लीजिये, जिसतलवार को हमने शत्रुओं के शिर जुदा करनेके लिये बहुत दिनोंसे अति तीक्ष्ण कर रक्खा था, आज उसीसे हमलोगों के मस्तकको काट, उस मेंदिनी को भेंटकर दीजिये, जो तलवार, यवनशत्रुओं के रक्त पानकी प्यासी, देखिये मांदुगाकी जीभकी भांति लप लपा रहीहै उसकी प्यास को। हमी लोगों के रुधिर से बुझाइये, पर महाराज! इन हृदयबेधी वाक्य बाणोंका प्रयोग न करिये। जो स्वाधीनता का स्वर्गीय सुख हम लोग यहां भोग रहे हैं, क्याकभी बड़े से बड़े राज सिंहासन पर बैठनेसेभी वह सुख प्राप्तहोसकता है! छिः मरना तो एक दिन हईहै, पर क्या उसके भयसे आजही हम अपने को बेच दें क्या दासत्व स्वीकार करनेसे हमारा मृत्यु भय जाता रहैगा फिर महाराज जब मरनाही है तो मान खोकर मरनेसे क्या! दिल्लीसम्राट को जय पत्र कदापि न लिखिये, चाहे हमलोग रसातलको भलेही चलेजांय, मिट्टी, में मिलजांय, पर हमलोग विधर्मी राजाका दासत्व कभी स्वीकार नहीं करेंगे। अधीनता से बढ़कर संसार में और कोई दुःख नहीं है क्या आप नही जानते हैं कि—

'नरकराजबरु होय प्रभु, नहीं स्वर्ग दासत्व।
पराधीन है जगत में, अतिशय दुःख करत्तत्व,

तिसपर भी दासता किसकी विधर्मी राजाकी; हमलोग "कायर" कहा कर अपने कुलमें बट्टा

क्योंलगावें जोजीवेगेतो स्वतन्त्ररहेंगे, अपनी जननीजन्मभूमि बचेगी किसी दुसरेसे "हाँ हाँ हूं हूं" नही करना पड़ेगा, और यदि रणमें काम आये तब तो फिर पुछनाही क्या। उससे बढ़कर और क्या पा सकते हैं। झट वीरगतिसे स्वर्ग लोक पधारेंगे। यहां कौन ऐसा है जो लड़ना छोड़कर पराधीन होना स्वीकार करेगा।"

८-भीलोंमेंसे भील सरदारभी खड़ाहोकर बोला-"सुनो रानाजी! हमलोगों के जीते जी यह कदापि नही होसकताकि राजपूत तथा भील लोग दिल्लीमें जाकर दिल्लीश्वरकी दासता स्वीकार करें? दूसरे की कौन कहे आप भी हमारी स्वाधीनताको नहीं बेच सकते। आपका जी चाहे तो जाकर बादशाह से सन्धि कर लें, पर हम भील लोग तो प्राण रहते कभी सिवाय हिन्दूपति के दूसरे किसी की गुलामी नहीं करने के। हम लोग अन्न, धन तथा वस्त्रहीन होकर इसी मरुभूमि की कणों में मिलजायँगे पर अकबर को जयपत्र कभी नहीं लिखेंगे।"

९-अपने भक्त सरदारों के इन उत्साह वाक्यों को सुन राना अब प्रसन्न चित्त हुए और बोले-"धन्य आर्य वीरों धन्य! हम तुम लोगों से ऐसेही उत्तरकी आशा रखते थे। तुम लोगों के ऐसे वीरोंके रहते हमे पूरा विश्वास है कि हमारी स्वाधीनता को कभीकोई छू नहीं सकेगा। स्वाधीनता से बढ़कर इस जगमें और परम सुखद वस्तु क्या है। स्वाधीनता रहित पुरुषका इसजग में जीना न जीना दोनों बराबर है। स्वाधीनता के विषयमें एक कविने कहा है-

'पराधीन है कौन चहै जीवो जगमांही। को पहिरे दासत्व श्रृंखला निज पगमांही॥ इक दिनकी दासता अहै शत कोटि नरक सम। पलभरकी स्वाधीन पनो स्वर्गहु ते उत्तम॥"

इसलिये राजभक्त भील तथा सरदार गणों अब हम लोगों को ऊपरके कथनानुसार काम करना चाहिये। ईश्वर हमलोगों का मनोरथ सफल करेगा, इस लिये आजही से सब मिलकर प्रतिज्ञा करो कि --

'जबलौं तनमें प्रान न तबलौं मुखको मोड़ौं। जबलौं करमें शक्ति न तबलौं शस्त्रहिं छोड़ौं॥ जबलौं जिह्वा सरस दीन बच नहिं उच्चारौं। जबलौं धड़ पर शीस झुकावन नाहिं बिचारौं॥ जबलौं अस्तित्व प्रतापको क्षत्रिय नाम न बोरिहौं। जबलौं न आर्य-ध्वज नभ उड़ै तबलौं टेक न छोड़िहौं॥,

श्रीराधाकृष्णदास--

१०—इसी तरहसे लोग अपनी सभा करही रहे थे कि सहसा एक सैनिक पुनः घबड़ाया हुआ दौड़ता आया और हाथजोड़कर कहनेलगा—"घड़ी खामा अन्न दाताजी! बड़ीभारी यवन-सेना इधरको उमड़ी चली आ रही।" सुनतेही प्रतापका चेहरा रक्त वर्ण होगया और दर्पके साथ खड़े हो म्यान से तलवार खींचकर पूंछा "सेना कितनीदूरपरहै, सैनिकने उत्तर दिया—"धर्मावतार! अभी एक कोसपर है इस समय प्रतापका चेहरा रक्त वर्ण होगया मानों साक्षात यमराजने अवतार लियाहो। राणाने अपना भाला और ढाल उठाया और नरसिंघा बजाने की आज्ञा दी। नरसिंघा बजते ही बहुतसे भील, राजपूत, और अमरसिंह तथा रानी पद्मावती इत्यादिक लोग दौड़े हुए आये। क्षणमात्रमें दो तीन सौ भील तथा राजपूत लोग एकत्रित हो गये। राणाका क्रोध अब शान्त हुआ और सबको कहा कि—"तुम लोग वृक्षके पत्तों को अपने समस्त शरीर मे लपेट वृक्ष शाखाओं पर जा बैठो,

हम लोगों ज्योंही शत्रुओं पर आक्रमण करेंगे त्योंही तुम लोग भी निशाना ताक यवनों पर तीर चलाना। महारानी पद्मावती को खोह में छिपा रहने के लिये कहा और राणा स्वयं पहाड़ पर चढ़ गये। थोड़ीही देरमें यवन सेना आती हुई दिखाइ पड़ी। राणा अपने दो तीन साथियों के साथ पहाड़ ही पर रहे। यवनोंने ज्योंही राणाको देखा त्योंही उनपर बाज की तरह टूट पड़े। राणा को अकेले देख सब राजपूत और भील लोग अति घबड़ाये कि "राणा अकेले ही क्यों लड़ने को तत्पर हैं। हमलोगों को धावा करने की आज्ञा क्यों नही देते हैं। नरसिंघा अभीतक क्यों नही बजाया।" राणा के पासज्योंही एक मोगल पहुँचा कि राणाने नरसिंघा बजाने की आज्ञा दी। नरसिंघा बजते ही भील गण आगकी नांई तीर वृक्षों परसे बरसाने लगे। राजपूत लोगभी टिड्डीकी तरह पर्वत दरारोंमें से निकलपड़े। राजपूतोंके निकलते ही दोनों दलमें घमासान युध्द होने लगा। अहा! प्रताप तूभी धन्य है, रणविद्या में भी तू अद्वितीय है। प्रताप ने चालाकी से अपने को पर्वतपर खड़ा कर के बड़ा काम निकाला। राजपूत तो पर्वत गुफा में छिपे थे ही, और मोगल भी पहाड़ पर चढ़ गये इसलिये अब राजपूत और मुसलमानों में अतिशय हृदय विदारक मल्लयुद्द होने लगा। कभी राजपूत पहाड़ पर से गिरते कभी मोगल। पर भीलों के तीर वर्षण और राजपूतों के घोर आक्रमण से बहुतसे मोगल मारेगये और बचे खुचे एक ओर भागे। इस युद्द में एक भील सरदार ने केवल दस मोगल ओर प्रतापसिंह के बचाने में उसने बड़ी वीरता से अपने प्राण दिये। जब प्रताप को बीस पचीस मोगलों ने घेर लिया

और ज्यो ही टूकटूक करनेके लिये आक्रमण किया त्योंही यहभील सरदार अपने दो चार साथियों के साथ एकदम गुफा में से निकल पड़ा। दस बारह मोगलो को तो उसने अकेले ही मारा पर और दस बारह को प्रताप ने स्वयं मारा। भीलकी इस वीरतासे मोंगलों ने पुनः उसपर सवेग आक्रमण कर टूक टूक कर ड़ाला। मोगल गण उस भील को जब मारने में लगे थे उसी समय थोड़े और राजपूत आगये और लड़कर राणा को बचाया। युद्धोपरांत राणा ने स्वयं भील के मृतक शरीर को उठालिया और अपने शिविर में लाए और रोते हुए उसके के सामने रखदिया। राजपूतोंने बनसे लकड़ी बीन कर एक चिता बनायी। भीलकामृतक शरोर चितापर रक्खागया और चितामें आग लगादी गयी। भील की प्रतिब्रता स्त्रीभी अपने स्वामीके साथ सती होगयी। सब क्रिया होनेके उपरांत राणा अब अधीर होकर कातर स्वर से कहने लगे—"अहा। वीर तू धन्य है! तेराही जीवन सफलहुआ तूने ही स्वर्ग सुख कमाया। अहा भील सरदार! तूने मुझे बचाने के लिये अपने प्राण दे दिये। तू हमारे सुख दुःख का भागी हो इस असार संसार से चल बसा। अहा! तुने हमारा कितना उपकार किया।। नहीं मित्र तूने उपकार नहीं किया बलकी मुझको महान कष्ट दे चला गया। हाय! यदि आज मैं मरगया होता तों इन बाल बच्चों के हृदयविदारक दुःख से मुक्त होगया होता पर मुक्त कैसे होता- मेरे भाग्यमें तो ईश्वरने दुःखही लिखाहैं। हाय! मैं कैसा भाग्यवान होता यदि आज मेरा प्राण अपनी जननीजन्म भूमि के बचाने में जाता, परन्तु उसको भील सरदार ने छीनलिया और मेरे सुख का भागी हो स्वर्ग कों पधारा।"

११- राणाको अति विह्वल जान सबने उनको समझाया। सरदारों के बहुत समझाने पर राणाको कुछ धीरज हुआ। इस समय राणाप्रतापसिंहमें इतनी शक्ति नहीं है कि स्वामि भक्त भील सरदारका कोई स्मृति—स्मारक—चिह्न स्थापित कर सकें। प्रतापसिंहने उसी के बर्छेको उसीकी चिताके नीचे गाड़ दिया, जिससे कि उनका प्राण बचा था। सरदारके भाला को गाड़कर कहा कि--"यदि कभी दिन फिरेंगेतो इस स्थानमें एक सुवर्ण स्मृति--स्मारकचिन्ह स्थापित करेंगे।" इसी तरह से राणाप्रतापसिंह बीरभील सरदार के विषयमें यह कहही रहे थे कि एक सैनिकने फिर आकर कहा—"धर्मावतार दस बारह मोगल फिर इधरको दौड़े आ रहे हैं। " राणाने म्यानसे तलवार निकालकरकहा " यदि दस बारहहैं तो कोई हानि नहीं। आओ वीरो चलो! इनदस बारहों को यमपुर पठा अपने भील सरदारके शोक पिपासाको तृप्त करें।" यह कह राणासैनिक के कहे अनुसार चलेओर पहुंचतेही सहसा आक्रमण किया। उस युद्ध में बृद्ध कृष्ण चांद वतने बड़ी वीरता की और स्वयं बेतरह घायल भी हुए। राणा कोभी इस लड़ाइ में घायल होना पड़ा पर उन्होंने दसो बारहों पर विजय प्राप्त की।

१२--वनवासी भीलो ने इसबार राणा प्रताप का साथ सगे भाई के सदृश दिया। उन्होंने अभागे प्रताप परिवारको जैसे तैसे रक्खा। जब जब मोंगलों ने आक्रमण किया तब तब उन्होंने राज परिवार को अद्भुत बीरता और रणकुशलता से बचाया। कभी २ मोगलों के सन्मुख जा उनसे लढाई ठान उनकी राह रोकी। ऐसा नहीं कि प्रतापसिंह ने इस दशामें कभीमोंगलोंको लहूलोहान नहीं

किया हो, उन्हो ने भी कभी कभी अकेले ही सैकड़ो मोगलों का सिर काट कर परिवार को बचाया । कुछ भी हो स्त्री पुत्र को संग रख कर हर घड़ी युध्द करना अब उनके लिये सम्भव नहीं है इस लिये उनको लेकर कहीं दूसरे स्थान को चले जाने ही में वे अपना सौभाग्य समझते थे। भीलगण कभी कभी राजकुमारो को वही खट्टे कसैले वनफल खाने को देते थे। भूखे राजकुमार उन्हें मीठे अमृत फलकीनाई खाकरतृप्त होतेथे। इन्हीं सुकुमार बालकों के असह्य दुःखको देख कर प्रतापसिंहके नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगती थी। भीलोंकी जो कन्यायें राजकुमारीयों के साथ खेलने को आती थीं। वेही उस समय उनकी साथिनी थी। राजकुमारी गण भील कन्याओं के संग रहतीं। सुख दुख, की बातें करतीं और उनकी ही बोलीमें उन्हें आदर से बुलाती थीं। भील कन्यायें अपना सखी भाव दिखाने की इच्छा से राजकुमारियों के लिये कभी २ खाने की वस्तुएं लाती, रानी इन हृदय वेधक और मर्मस्पर्शीय वस्तुओंको सहर्षग्रहण करती, कभी२उन्हें आर्शिवाददेती और कभी २ सिर पर हाथ मार रो उठती। फिर आंखों का पानी आंखों में ही रोक उस अन्तर्दाहिनी यन्त्रणा को हृदय में ही ठण्डा कर चैतन्य होतीं कि कहीं पुण्यात्मा स्वामी का दृढ़ प्रतिज्ञ व्रत भंग न हो जाय।

१३—भील सरदार लोग प्रतापसिंह की तन, मन, धन, तीनों से अति श्रद्धा के साथ सेवा करते थे। एक दिन प्रतापसिंह परिवार के साथ बैठे हुए थे कि इतने में चारो ओर से "दीन दीन चिल्लाने की ध्वनी सुनाई पड़ी। तुरंत ही विश्वासी भील दौड़ते हुए आकर हांफते हांफते अपनी बोली में कहने लगे-" राना तेरा सब

नाश हुआ ! रे सर्व नाश झटपट, बेटा बेटीको सँभाल रे सँभाल।"
प्रतापसिँह ने सोचा कि अब सेकड़ों मोगलों ने जंगल को चतुर्दिग से घेर लिया है तो कदाचित आज परिवार की प्रतिष्ठा बचनी कठिन है। इस समय प्रतापसिंह कुछ छके पर धीर प्रताप ने बड़ी सावधानी से काम किया। प्रतापसिंह ने संकेत द्वारा भीलों को समझाया कि परिवार को किसी जगह जाकर सघन बन वा गुफा में छिपावे प्रतापसिंह स्वयं कुछ राजपूतों को ले यवन संहार निमित्त एकओर चले। आज प्रतापसिँह स्वयं सेकड़ों को मारेंगे, और यदि वस्वयं परिवार को ले जाने में लगेंगे तो उनका कहीं ठिकाना भी नहीं लगेगा। अगर मोगल उनको न पावेंगे तो वे सारा जंगल पत्तापत्ता कर के ढूँढ ड़ालेंगे। अन्त में उन्हे परिवार के साथ देखेंगे तो वे सहजही में उनके ऊपर आक्रमण करेंगे। भीलों ने प्रतापसिंह का संकेत समझकर तुरन्त अपने दल बल को इकट्ठा किया और राज परिवार को टोकरों में बिठाकर उन्हें अन्धकारमय अपने जँगल में लेकर चले गये। मोगलों का एक बड़ा समूह देखकर एकबार तो प्रतापसिंह की आंखे चोंधिया गयीं परन्तु तुरत ही धीरज धर बड़ी फुरतीसे तलवार निकाल हुँकार मार साक्षात यमराज बनकरउन्हों ने अकेलेही उन सेकड़ों मोगलोंके प्राण लेनेका विचार किया।

१४--विचार कार्यरूप में परिणत हुआ, आंख झपकतें ही लगभग सैकड़ों मुगल धराशायी हो गये, और बचेबचाये प्राण लेकर भागे। बुरे दिनों के साथी भीलों ने भी उस समय प्रतापसिंह की बगल में खड़े होकर यथासाध्य सहायता की थी। उधर परिवार को बन में छिपाकर रख एक भील ने उनको आकर सूचना दी—" राजा। तेरे बेठा बेटी रानी सब अच्छा तरह छिपे हैं

कुछ डर नहीं है। मानू, कानू, भानू, इत्यादिक सब पहरे परहैं। जावरके जङ्गलमें उन्हें रख आयाहूं, तुमभी वहीं चलो। स्त्री, पुत्र कन्याको जावरेके अतिशय हृदय विदारक दुर्गम और घनघोर जङ्गलमें सकुशल पहुँच जानेकी बात सुनकर प्रतापसिंहके जीमें जी आया। दर्प और शोकके कारण उनके नयन अश्रुपूर्ण हो जल बहाने लगे, परन्तु तुरन्तही उस भीलके साथ उसी भयानक जङ्गल की ओर पधारे। दो एक देशभक्त और स्वामिभक्त सेवक साथ हो लिये। उस दुर्गम बनके भीतर पहुंचकर प्रताप सिंहने देखाकि उनके प्राणोंसे अधिक प्यारे बालक एक अतिशय विशाल बृक्षकी शाखाओं में लटके हुए बांसके टोंकरोंमें पड़े झूल रहे हैं। बाघ आदि कोई हिंसक, जन्तु उनको मार न डाले, इसीसे भीलोंने उनको इस तरह रक्खा था;। इसके सिवाय उस पेड़के चारों ओर एक जालको इस तरह तान रक्खा था कि यदि कोई हिंसक जीव वहां आवे तो उस जाल में फँसकर वहीं फट फटाकर मर जावे।

१८-भीलोंकी ऐसी निष्कपट सहानुभूति और सच्ची भक्ति देख कर प्रतापसिंहके नयनोंसे छल छल करके आंसुओं की धारा प्रवाहित होने लगीं। एक बृद्ध भील यह देखकर कहने लगा "राजा क्यों रोवे है ऐसेही दिन तेरे न बने रहैंगे तेरेको रोता देख तेरे बेटा बेटी सब रो उठंगे। यह देख, तेरेको रोता देख रानी मैया भी रोने लगी है। आ-हा—रे भगवान!" सीधे सादे भील की ऐसी बातें सुन, और उसकी सच्ची प्रीतिको देखकर प्रतापसिंहने अपने आंसू रोक लिये, तदुप-रान्त वहांपर जितने भील थे, उन सबको स्नेह पूर्वक, एक एक करके भेंटा। जावरके अतिशय भीषण और भयानक जङ्गलमें

प्रतापसिंहने अभागे परिवारके साथ बहुत दिन काटे इस कठिन समयमें उनको यही स्थान अपने बचावके योग्य मिला । इतनी दूर इस भयंकर वनमें अब मुगलोंने उनका पीछा न कर पाया। महारानी पद्मावती, सहिष्णुताकी वही मूर्तिमति प्रतिमा, आशाके समाधि स्तम्भपर खड़ी हुई अब भी हँस हँस कर स्वामीको सुदृढ़ चित्तसे व्रत पालन करनेके लिये उत्साहित कर रही है।

१६–एक दिन राणाने अतिशोक जनक बातोंसे रानीसे कहा प्यारी! सारी आशास्वप्नही जान पड़तीहै, आज लगातार अठारह उन्नीस वर्षसे एकसे दिन कट रहे हैं । क्या हुआ ? व्रत तो अब भी भंग नहीं हुआ है । परन्तु इससे क्या देशका कुछ काम तो मैं करही नसका । उलटा देश भरका सत्यानाश किया । पिताजी ने तो अकेला चित्तौरही खोया था, और मैंने आशाके भरोसे समस्त खो दिया । अन्तमें वनवासी हुआ, वस्त्र और धन रहित वनवन घूम रहाहूं, " पद्मावतीने उत्तर दिया--" लेकिन स्वामी ! इस भिखारी दशामें भी तो आपका हृदय राजराजेश्वरकासा बना है। राजपूतके हृदय क्षेत्रमें जो बीज आपने बोयाहै, एक दिन उसीमेंसे स्वाधीनताका अक्षयवट उत्पन्न होकर इस विशाल भारतको अपनी शीतल सुखदाई छायासे सुखीकरेगा। फिरनाथ! आप दुःखी क्यों होतेहैं। प्रतापसिंह ने फिरकहा—"प्यारी सहस्रों राजपूतोंने मेरे मुखकी ओर देखकर, स्वदेशके लिये अपना जीवन होम दिया। मेरेही कारण उनके इस जीवनके सुख और सर्वकार्य्य जड़से नष्ट हो गये। हम लोगोंके रहते इस भारतकी यह दशा हो ? अहा ! जिस जगद्विख्यात हस्तिनापुर और इन्द्रप्रस्थ में प्रातः स्मरणीय महाराज युधिष्ठिरने भाइयोंसहित वास किया था,

जिन महात्माओंने उस स्थानपर राज्य करके ससागरा पृथ्वीपर आपने गौरवका विस्तार कियाथा, उसी स्थानमें आज म्लेच्छोंका अधिकार है। धिक्कार है! हमारे ऐसे राजपूतोंको, पर इसमें हमारा वश नहीं क्या? अहा! उसी स्थान में भीष्म पितामह, अर्जुन, द्रोणाचार्य भारत भूमिके महावीर पुत्रोंने अपना वीर्य प्रकाशकर अक्षययश लाभ किया था। कुन्ती, द्रौपती, गान्धारी, भारतकी प्रातः स्मरणीया ललना गणने उसीस्थानको अपनी सती और साध्वी चरित्रोंसे पवित्र किया था, अपने जाज्वल्यमान और अद्वितीय कलाकौशलसे भूमण्डलकी प्रत्येक राणियोंका मात किया था, हाय!" इनसब बातोंको कहते २ प्रतापसिंहका कण्ठरुकगया और दोनों नेत्रोंसे अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। पर वाहरे प्रताप तेरा कलेजा!! तू धन्य है,!!! तेराही होना इस भारतमाताके लिये सार्थक था। यदि वास्तवमें था तो तूही एक भारतका सच्चा पुत्रथा। प्रतापसिंहने फिरधीरजधर गद्गद स्वरसे कहा,-"हे देवतुल्य पुरुषगण! मैं आप लोगोंका साक्षात दण्डवत करता हूं। हमारी भुजाबल शून्य, हमारे नयन अन्धकारसे ढके, औरहमारे हृदय क्षीण हैं। आप इन नील नभ मण्डलसे प्रसन्न होकर प्रकाश दीजिये, बल दीजिये, असि धारण करनेकी शक्ति दीजिये, जिससे हम फिर आर्य जातिका नाम ऊंचा कर सकें, नहीं तो इसी कार्य्यका उद्यम करते करते मृत्युहो जाय? इसके अतिरिक्त मेरी और कोई अन्य प्रार्थना नहीं है। हा? ईश्वर! कल्याण तो दूसरी ओर रहा मैंने तो अपने बचे बचाये राज्यका भी तीन तेरह करडाला"।

१७ - पद्मावती ने कहा—"स्वामिन! धीर वीर होकर अधीर होते हो? कल्याण के लिये आप क्या कहते हैं। अहा! क्या इस

कल्याणसे बढ़कर और कोई कल्याण हो सकता है, कि आपने अपना सर्वस्व तन, मन, धन, सभी अर्पण कर, निज मातृ-भूमीकी सेवाके लिये समर्पित कर दिया। स्वाधीनताके कल्याण मन्दिरमें जब आपने अपने को आहुती देदी तब इससे बढ़कर कल्याण करनेकी और कौनसी बात है? अपनी आखोंके बालबच्चे भूके प्यासेपेड़ के तले लोट रहे हैं ! आप स्वयं बनवासी, सर्वत्यागी, सन्यासी बन रहे हैं। आपकी धर्म्मपत्नी यह अभागिन दासी छायाकी भांति आपके संग लगी फिरती है। बनवासी भील सहेरिया, मीना, किरार, इस समय आपके संगी साथी मित्र बान्धव रक्षकके सदृश सहायक हो रहे हैं। स्वामी धीरज धरो क्योंकि दिनका उजाला व्यतित होनेपर फिर दिन आता है। शीत काल बीतने पर नवीन फूल खिलते हुए ऋतुराज का आगमन होताहै। दिनके पीछे रात्री और रात्रिके पीछे पुनः दिन होता है, जब सभीका आगमन पुनः होता है तब क्या आपकी मातृभूमिके गौरव-दिन नहीं आवेंगे? क्या आपको फिर मेवाड़ प्राप्त नही होगा? होगा स्वामी होगा केवल धीरज का काम है।"

१८—इन वाक्योंसे प्रतापका हृदय उमड़ आया और आंसू भरकर उन्होंने कहा "प्यारी! ये बातें तुझीको शोभा देती हैं। प्यारी व्रतका पालन तो किया और जीवन होम कर उसका उद्यापनभी करूंगा, परन्तु यह प्राण तो अब शिथिल हो रहे हैं वे अब अहार विहार विषय भोगके लिये पशुकी नाइ दौड़तेहैं। जीवन यज्ञमें क्या मैंने सर्वाहुती देने पाई"। कहते कहते प्रतापसिंह का चेहरा रक्तवर्ण होगया और फ़िर मानसिंहको धिक्कारने लगे। "अरे पामर! तुझको अपनी करतूतपर लज्जित होकर घर बैठना

चाहता था न कि एक अनुचित कार्य करके उसको ढांकनेके लिये दूसरा घोरतर अनुचित काम करना था हा ! जब तेरा मान ही नहीं तो तूने अपना नाम मानसिंह क्यों रक्खा ? चाहे हम लोंगोंका हिन्दुधर्म भला हो या बुरा परन्तु अबतक हम हिन्दु धर्म अवलम्बन किये हैं. उसके नियमोंका पालन करना हमारा परम कर्त्तव्य है जहां हमारे धर्मानुसार हिन्दुओंमेंही एक जाति दूसरे जातिको बनाया अन्न नहीं खाती वहां विधर्मी मुसलमानोंको बेटी देना क्या कम लज्जा और घृणाकी बात नही है; और फिर यदि तुमने किसी कारणसे ऐसा कामकर भी डाला था तो चुपचाप लज्जित होकर उसके लिये पश्चाताप करना था, न कि और बचे बचाये लोगों का धर्म नाश करना; दो चार लड़ाईयोंको जीत कर तुम्हारा मन बहुत बढ़ रहा है। इसलिये उसको चूर्ण विचूर्ण करनेके लिये मैंने यह विचार किया है कि बनवासी हूंगा। पर तुम्हारे सामने मस्तक कभी नहीं झुकाऊंगा। प्यारी ! रामचन्द्र बनमें कितने दुखित थे और उनकी पतिव्रता स्त्री सीता उनकी कैसी सेवा करती थीं। इसी भांति तुमनेभी किसी तरहकी त्रुटि नहीं की। इसलिये प्यारी ! मुझको जङ्गल जङ्गल घूमना अच्छा लगता है उन अच्छे और रत्नखचित सिंहासनोंकी अपेक्षा बन बनमें सन्यासियोंकी नांई घूमकर शिला खण्डोंपर बैठना अच्छा लगता है; पर किसीका दासत्व स्वीकार करना मुझको कदापि अच्छा नहीं लगता। राजदरबारके उन बढ़िया बढ़िया भोजनोंके बदले बनके ये खट्टे मीठे बेर अच्छे लगते हैं, पर दास होकर अपयश और अधर्मका भागीहोना नहीं अच्छा लगता। क्योंकि—

तरु छाया आसन शिला, भीलन सङ्ग निवास ।
परम सुखद पै धर्म तजि, रुचत न राज विलास ॥

१९.--रानीने उत्तरदिया "नाथ हमारा अणुमात्र अपराध भी अपने हृदयमें मत रखियें । प्रभो ! क्षमा कीजियें हम स्त्री जाति कहांतक समझ सकती हैं । हमारे लियेतो यह भाग्यकी बातहै कि आपकी सेवाका अधिक अवसर मिलेगा । क्योंकि-

जलभर सब थल स्वच्छ करि, नाना पाक बनाय ।
बड़ भागिनि बीजन करूं, श्रमित पलोटों पाय ॥

प्रतापसिंहने फिर अति कातर स्वरसे कहा--"अहा प्यारी ! तुम धन्य हो ऐसी बातें यदि तुमसे न निकलेंगीतो और किससे, भला मानसिंह भला ! तुमने जोकिया अच्छा किया; परन्तु इसका प्रतिफल तुम्हें दिये बिना मैं विश्राम नहीं लेनेका; इसलिये मैं आजसे यह प्रतिज्ञा करताहं कि--

"जबलौ नहिं गढ़ ढाहि करि, दासिन कौड़ी बेच ।
करौं न दक्षिण कर असन, सेज न पगिया पेच ॥

रानीने पुनः हाथ जोड़ कर कहा--" स्वामिन् ! आप ज्ञानी, ध्यानी और दूरदर्शीहैं आपको मैं क्या बताऊं;ऐसी कठिन तुषानल को हृदय पर रखकरभी यदि व्रत उद्यापित न कर पाया तो यह हमारे अभाग्यहीका फलहै ।" प्रतापने कहा-"अभाग्यका फल जो है वह ता ठीक ही है; परन्तु उसके अतिरिक्त एक और भी बातहै । भगवानके ऊपर पूरा भरोसा रखना हमने आजतक नहीं सीखाहै अबभी आदमीका मुँहताकते हैं, पग पगपर दूसरोंके मुँहको देख कर चलते हैं । यदि इतने दिनोतक पाण्डवोंकी नाई मनसे साधना करते तो कृष्णको कृपाका सखा बनाकर नर--नारायण होजाते पर

हाय ! हमारी छोटी बुद्धिने ऐसा भरोसा करना नहीं सीखा है।" महारानी स्वामीकी इस कातरताका अर्थ न समझकर उनके मुख की ओर आंखें डब डबाये निहारती रहगयों। उत्तेजित होकर प्रतापसिंह चिल्ला उठे। "हे अनाथोंके नाथ, पाण्डव सखा ! अब तुमकहां हो ! प्रभो ! दर्शन दो इस माया बन्धनसे छुड़ाओ, जीवन की इस ज्वालाको बुझाओ, देखो मैं तुम्हारे पैरों पड़ विनती कर रहा हूं अगर इच्छा हो तो अपने इस देशकी रक्षा करो।" हाय ! हाय ! अबभी कामना बनी है। अरे ! अब भी दुःखको बुलाते हों ! प्रतापसिंह तुम मनुष्य हो कि देवता हम नहीं जानते इसीसे हम कहते हैं कि देवताओंके सर्वोच्च आसनपर प्रतापसिंह विराजमान; यहांपर विराजमान हो रहे हैं; और हम इन्हें देखकर आनन्द विस्मय और भक्ति में मग्न होजाते हैं। सुख दुःखके निय-मोंमें बँधा हुआ तुच्छ मनुष्य, तुम्हें मनुष्य रूपहीमें देखना चाहता है, तुम्हारे मानुषीकार्योंके साथही उनकी सहानुभुति अधिक है। तुममें मानुषी दुर्बलता तनिकभी न देखनेसे वे तुम्हें मानव सृष्टीमेंसे न समझेंगे। उन्होंने तुम्हारे जीवनको मध्यानहीमें सबसे ऊंचा देखा है वे तुम्हारे अलौकिक व्रतपालनको देख कर अचरज में डूबे हैं। अब हम तुम्हें साधारण मनुष्य रूपमें न देखकर तुम्हारी अपूर्व जीवन कथा कहते हैं तुम्हारे बचपनके प्रधान सखा भक्त चांदावत कृष्णसिंह भी तुम्हारी यह देव प्रकृति देखकर एक दिन मनही मनमें कहने लगे थे। "यह महाराणा उदयसिंह की त्रुटियों को पूरा करने और मनुष्योंको स्वदेशभक्तिकी शिक्षा देने के लिये ही क्या प्रतापसिंहने इस मृत्युलोकमें अवतार लियाहै।"

२०—प्रतापसिंहको इसतरह बनमें घूमते २ बीस बाईस वर्ष हो गए पर तिसपरभी जननी जन्मभूमिका उध्दार न कर सके। अकबरने भी खिन्न होकर अपने सरदारोंको बहुत जागीरोंकी लालच दी कि "अगर कोई प्रतापको जीता पकड़ लावेगा तो उसे मैं अपनी सल्तनत का दसवां भाग देदूंगा" धनके लोलचसे दलके दल लोग प्रतापसिंहको ढूढ़नेके लिये निकले। दलके दल मोगल सिपाही दलके दल अमीर उमराव सब विशाल अरावली पर्वतको रत्तो करके ढूड़ने लगे परन्तु प्रतापसिंहको कहीं पता नहीं लगा। अन्तमें मोग़ल सिपाहियोंका एकदल उस पुरस्कार की आशासे प्राणोंको हथेलीपर रक्खे प्रतापसिंहका पता लगाते लगाते जावरेके उसी घने वनमें पहुंचे। इन मोगल सरदारों ने प्रथम तो दो भीलोंको देखा जिनको उन्होंने घेर लिया। उन दो भीलोंमेंसे एक तो किसी प्रकार निकल भागा पर एक घिर गया। उसको सभोने पकड़ा और कहा कि "अगर तू रानाप्रतापको नहीं बतलावेगा तो तुझको यहीं पर बोटी बोटी कर डालेंगे।" भीलने उत्तरदिया--"चाहे बोटी बोटी कर उसके भी हजारों टुकड़े कर ड़ालो पर मैं जगह नहीं बताऊंगा कि प्रताप कहां है। इसपर मोगलोंने त्रास दिखाकर उसको बोटी२ काटड़ाला पर उसने रानाप्रतापको नहीं बताया। अहा ! स्वामीभक्तभील तूधन्य है अहा हा ! तूने एकदुखी राजाके लिये अपनाशरीर तृणके समान दे दिया। दूसरा भील जो भागा था उसको भी इतनी चोट आई कि राना तक पहुँचते २ वह भी मर गया। परन्तु रानाको मोगल-आगमन की सूचना मिल गयी। जब राना ने देखा कि भील हमारेही लिये चोट खाकर गिरा है तब उनसे बगैर रोये न रहा

गया। छल छल आंसूकी धारा प्रवाहित होने लगी। रानाने धीरज धर उन मुगलोंको मार-जो कि उसके पीछे लगे थे-धीरेसे उस भीलको उठा लिया और पहाड़के एक ओर रख दिया, उसको एक ओर रख प्रतापसिंह फिर जल्दीसे आकर मुगलोंको रोकने के लिये खड़े होगये। लकड़ी, बांस और लोहेके डण्डे जो उन्हें मिले वही उन्होंने इकट्ठे किये। अनेक भील तो उन्हीं टूटे फूटे डण्डोंको लेकर खड़े होगये; और बहुतोंने अपना तीर कमठा सुधारा; प्राण रहते सबने मुगलोंको एक पग भी आगे न बढ़ने देनेकी प्रतिज्ञा की। सरदारोंमेंसे प्रतापसिंहके वेही एक मात्र जीवनमित्र, चांदावत् कृष्णसिंह अबभी उनके साथ थे। बाकी सब प्रतापसिंहके बुरे दिनोंके आरम्भमें ही छूट गये थे। उन्हीं एक मात्र सहाय वीरवर चांदावत् और पुत्र अमरसिंहको लेकर प्रतापसिंह मुगलोंके सन्मुख-आक्रमण से पार पानेका प्रयत्न करने लगे। भीलगण वेही लकड़ी बांस और लोहेके डण्डे लेकर, और तीर धनुष बांध कर उत्तरकी ओर खड़े हो गये। वीर चांदावत् पूर्वकी ओर हुए; दक्षिणमें कुमार अमरसिंह जा डटे; और पश्चिममें स्वयं राजस्थानकेशरी महाराणाप्रतापसिंह शत्रुओंके आक्रमणको रोकनेके लिये मूर्तिमान यमराजकी नाईं विराजमान हुए। चारों ओरसे इसप्रकार राजपरिवारकी रक्षाके लिये जीवित-परिखा निर्माण की गयी। सरदार, कुमार और महाराणा के हाथोंमें चमचमाती तलवारें शोभा पाने लगीं।

२१-शत्रुदलने असीम उत्साह के साथ "दीन दीन" पुकार कर चारों ओरसे उस बनको घेर लिया; परन्तु जो देखा तो चारों ओरसे राह रुकी हुई पाई। यह देख मुगलोंने भी चार भागों

में घुँटकर घोर युद्ध करना आरम्भ किया। प्रतापसिंहका अभागा परिवार उस समय उसी शत्रुदल वेष्टित अरण्यमें एक वृक्षके तले बैठा आया था। भील दलकी ओरसे उन्हीं बांस, लकड़ी और कोईके डण्डोंकी मार आरम्भ हुई; इससे दसबीस गिरे, दोचार घायल हुए और एकदो मरे भी। तीर कमठेका काम भी ऐसाही निकला परन्तु कुछ अधिक मुगलोंके हाथोंसे भी दस पांच कटे और दो मरे; किन्तु वीरवर चांदावत् और महाराण प्रतापसिंह दो दिशाओंमें थे उन दोनों दिशाओंके मुगल प्रायः सब कट चुके थे। देखते देखते दोनों दिशाएं साफ होगयी। ढ़ाड़स बांधे दोचार जने विपुल पुरस्कारकी आशासे अबभी जूझ रहे थे कोई कोई प्राण लेकर पहिले तो भाग जाते, पर साथियोंको लड़ते देख कर फिर लौट आते थे। दक्षिणमें कुमार अमरसिंहकी ओर तीनों ओर कासा कोई सन्तोषजनक फल नहीं देख पड़ता था; क्योंकि एक तो उनकी अवस्था कम; दूसरे युद्धमें वे भली भांति निपुण न थे, इस कारण चांदावत कीसी रणदक्षता न दिखला सके; तबभी आरम्भ में जो वीरता उन्होंने दिखाई वह वीराग्रगण्य प्रतापसिंहके पुत्रके लियेही सम्भव थी। देखनेसे जान पड़ता था कि अन्तमें उससे अपनी रक्षा न हो सकेगी। चांदावत और प्रताप सिंहने यह सब देखा, और समझा भी, परन्तु कुमारकी सहायता केलिये वे पहुंच नहीं सकतेथे क्योंकि वे जानतेथे कि यदि दोचार मुगलभी इन दोनों ओरसे व्यूह भेदकर भीतर घुस पड़ेंगे तो स्त्रियों की प्रतिष्ठा जाती रहेगी। युद्ध करते करते कुमार अमरसिंह का भी अङ्ग शिथिल हो गया था।

२२--यवनोंसे व्याहे जानेके भयसे पृथ्वीराजने अपनी कन्या

प्रतापसिंहके यहां भेजदी थी। इस दुःखसमयमें उस युवतीने सारा चरित देखा। कुमारअमरसिंहके शरीरसे रुधिर प्रवाहित होते देख कर उस सुन्दरीकी आंखोंमें जल भर आया। यह क्या वह चा-ण्डाल मुगल इधरसे पैतरा बदलकर अमरसिंहके सिरपर तलवार मारनाही चाहता है। अरे! वह दूसरा उधरसे उनके कन्धेको ताक रहा है और हाय! तीसरा अलगही उनकी छातीमें तलवार घुसेड़नेकी ताकमें ध्यान लगाये बैठा है। उस वीर कन्याने जब यह सब देखा तब उसने जीवन सर्वस्व प्रतापसिंहके पुत्रको अपनी आंखोंसे जीवनको संकटमें फँसते देखकर वहक्या निश्चित बैठीरह सकतीथी? कदापि नहीं पृथ्वीराजकी एकमात्र कन्या उससमय और कोई उपाय न देख बृक्षकी जड़में गड़ा हुआ,एक बर्छी उखाड़ उसे ले तुरन्त दौड़कर कुमारके पास जा पहुँची। पद्मावती व्याकुल होकर "अरे! कहां जाती है" पुकारती हुई उसे पकड़नेके लिये उसके पीछे दौड़ी। कन्याने कुछ न सुना और चिल्लाकर कहा- "मां कुछ डर नाही है-मैं तुमसे कहतीहं, कि बाल बच्चोंको समेट कर सावधानीसे रहो राजपूत बाला कभी युद्धसे नहीं डरती है" नवयौवना परम रूपवती, सुन्दरी, भैरवी बन शीघ्र अमरसिंहके पास जा पहुँची और क्षणमात्रमें उसी मुगलको मार गिराया जिसकी तलवार यमके सदृश अमरसिंहके मस्तक पर नाचरहीथी। मुगल "या अल्लाह" कहके गिर पड़ा और उसके प्राण पखेरू उड़ गये। जब अमरसिंहने देखाकि पृथ्वीराजकी कन्या पतङ्ग की भांति अग्निकी ओर मरने लिये दौड़पड़ी तब उनको अतिशय शोच हुआ और शोचने लगे कि अब इसका प्राण बचना कठिन है। इतनेहीमें एक मुगलने अमरसिंहके हाथमें तलवार मारनी चाही,

कन्याने फिर उसी बर्छेसे उस मुगलके भी प्राण ले लिये। अमरसिंहसे अब न रहागया उन्होंने चिल्लाकर कहा-"अहा । बीर कन्या ! आज तूही मेरी जीवन दात्री हुई।" इसीमें फिर एक मुगलने अमरसिंहके शिरपर ताका, कन्याने इसे भी भालेकी नोक से मार गिराया। इस देवी स्वरूप कन्याकी वीरताको देखकर मुगल लोग तो प्रथम तो बिस्मित हुए, पर उनके लिये यह अति लज्जा की बात थी कि एक काफिर औरत मुगलोंको मारे; इस लिये चार पांच मुगलोंने मिलकर एक साथही असीम साहससे घोर आक्रमण किया।

२३-वास्तवमें वह कन्या आज रणचण्डी मूर्त्तिधारण करके समराङ्गण में आविर्भूत हुई। निमेष मात्रमें तो उसने दो मुगलों को मार गिराया। पर हाय ! बचे हुए एकने यह क्या किया ? अमरसिंह जिस मुगलसे लड़ रहे थे और जब उसको मार कर पीछे देखा तो पृथ्वीराजकी कन्याको असिघातसे धराशायी पाया अमरसिंहने रोते रोते झट उसे उठा लिया और रोकर कहने लगे- "हाय ! मैं ने तुम्हे नहीं पहिचाना था ? क्या तुम सचमुचही कोई देवकन्या थी अथवा साक्षात् देवी रूप होकर आयी थी ? नहीं नहीं जाना तुमने मेरेही प्राण बचानेके लिये इस मृत्युलोक में जन्म लियाथा।" उसवीर बालाने अन्तिम समय बड़ी नम्रता से उत्तर दिये---"अहा ! आज कैसे सुखका दिन है, युद्धक्षेत्रमें मेरी अन्तिम सुखशय्या बिछी, अहा ! आजही चिता पर शुभ विवाह होगा; अहा ! आज मैं अपना धर्म निर्वाह कर अपनी जन्म-भूमि माताकी गोदमें लेटा हूँ। पितासे कहना कुछ शोक नहीं करें गे।" इसी तरह कहते २ उस वीर कन्याने धीरे धीरे अपनी

आंखे बन्द करली; उसका सारा शरीर ठण्डा होगया। चतुर्दिक सन्नाटा छागया। प्रायः सब मुगल मारेगये, दो एक बड़े कष्टसे प्राण बचाकर भाग गये। थोड़ी देरमें एक एक करके भील लोग चांदावत् कृष्णसिंह और महाराणाप्रतापसिंह सब अमरसिंहके पास आये। पिताको देखतेही अमरसिंह रोकर कहने लगे-"पिता! सर्बनाश हुआ, मुझे बचाने के लिये पृथ्वीराजकी कन्या यम गुफामें कूद पड़ी और अपने प्राण दे दिये।" अमरसिंहकी इस हृदय बिदारक सूचनासे चतुर्दिक हाहाकार मचगया। महारानी पहुँची और देखा कि चम्पक वदना प्रस्फुटित कमलिनी रक्तसे परिपूर्ण धूलिमें पड़ी है। ढाह मार कर वे रोने लगीं और अपनी गोदमें उस कन्याको उठालिया। अब सैकड़ों सहस्त्रों बार वही आनन्दमयीमूर्ति, मनमें जागरित होने लगी। वह सुन्दर शरीर चित्र लिखित भ्रूयुगल, वह भ्रमरकृष्ण उज्जवलनेत्र वह पुष्प विनिन्दित मधुमय दोनों अधर; वह निविड़ केशपाश; वह सुगोल वाहु युगल एक एक करके मनमें जगरित होने लगे।

२४-कन्याके मरनेपर वीर प्रतापसेभी बिना रोये न रहागया। प्रताप भरे गलेसे रोकर कहने लगे---"हाय! बालिका इस अभागे कुटुम्बके साथ रहकर अन्तमें तुमने अपने प्राण दे दिये। हाय! अब पृथ्वीराजसे हम क्या कहैंगे कि तुम्हारी पुत्री, पुत्र अमरसिंहके बचानेमें मारी गयी। हाय! यदि यह मालूम होता कि ऐसेर दुःख तुमको पड़ेंगे तो मैं तुमको अपने साथ न लेता। हाय! हाय! इसके लिये हे ईश्वर! तू साक्षी रहना, मैंने इसकी सेवामें कुछभी त्रुटि नहीं की। और पृथ्वीराज! आज मैं तुम्हारी एक मात्र प्रेम-मयी कन्याको, तुम्हारे पीछे चितापर रखकर फूँक देता हूँ। हे!

करुणामय ! भगवान ! दीनानाथ ! क्या तुम्हारे हृदयमें इन दीन दुखियोंके लिये यहीथा हाय हाय....." । शोक सन्ताप-धार बड़े वेग सेबहने लगी,सबके हृदय--विदारक विलाप और आर्त्तनादसे जङ्गल गूँज उठा । प्रतापसिंहकी आज्ञानुसार शीघ्रही चिता सजायी गयी । कुमार अमरसिंहने अपने हाथोंसे उस सुवर्ण प्रतिमाको चितापर लटा दिया । अग्निलगायी गयी । चिता धूँ धूँ करके जलने लगी । थोड़ी ही देरमें वह काठका ढेर और पृथ्वीराजकी कन्याका शरीर राखकी ढेरी होगयी ।

२५--प्रतापसिंहने चाहा कि "उसके माणिक–आदर्श के लिये सुवर्ण प्रतिमा स्थापन करू, पर हाय ? बिचारेको जब खानेहो को नहीं है तब सुवर्ण प्रतिमा कहांसे स्थापित हो । प्रतापसिंहने अपने उसी रुधिर पिपासा प्रिय बर्छेको, जिससे अकेले उस कन्या ने पांचछः मुगल मारे थे, उसकी चिताके नीचे गाड़ दिया और कहा--"यदि कभी ईश्वरकी कृपासे दिन फिरेंगे तो इस स्थान को ढूँढ कर पृथ्वीराजकी कन्याके स्मृति--चिन्ह--स्वरूप एक सुवर्ण प्रतिमाको यहां प्रतिष्ठित करेंगे जब पृथ्वीराजको यह समाचार मिला कि मेरी कन्या राणाप्रतासिंहके पुत्र अमरसिंह के बचानेमें मरी, तब उनके हर्षकी सीमा न रही । उन्होंने कहा–"पुत्री ! तेराही जीना इस जगतमें सार्थक है,तूनेही राजपूत रक्तका और मेरा नाम रक्खा । मुझको तेरे मृत्युकी कुछ भी चिन्ता नहीं है; वरन मैं हर्षित हूं ।" इस घटनाके पश्चात् भी राणाने अकबर की आधीनता स्वीकार न की । वन वन घूमे । दिन दिन भर भोजन रहित हो गुफादिकोंमें पड़े रहते थे । रानीका शरीर कभी कभी देखकर रो उठते थे, इस प्रकार अनेकों दुःसह दुःखोंने उनका

पीछा किया था परन्तु वीर प्रतापने धीरज धर सब सहन किया। किन्तु अकबरका दासत्व उन्होंने स्वीकार न किया। वीर धीर प्रतापके विषयमें श्रीवेङ्कटेश्वर समाचारमें "प्राचीन वीरता" नामी एक कविता में इस प्रकार लिखा था।

(१)

वीर पुरुषका काम यही है;
जो निज व्रत में डटा रहे।
कायर पुरुष वही है जग में;
जो निज व्रतसे हटा रहे॥

(२)

वीर प्रताप बनही वन घूमे;
सुत दाराके साथही साथ।
भूखों रहकर घासहिं खाकर;
नहीं झुकाया अपना माथ॥

(३)

दृढ़--चटानके समान राना--
डटे रहे; नहिं था कुछ शोक।
मेघहिं चोट अधिक सहता है;
सहता वायु-वेगकी झोंक॥

(४)

बिजली भी उसपर गिरती है;
मुसलधारकी सहता चोट।
बिविधि भांतिका कष्ट सहन कर;
नहीं छिपाता मुखकरि ओट॥

(५)

पैने तीखे कांटे उसको ;
वायु वेगसे गड़ते हैं ।
नदि, नाले अरु सोते, झरने ;
उसको धर धर खाते हैं ॥

(६)

पर्वत हिमयाचल जिस भांती--
अपने प्रणसे नहिं हटता ।
उस प्रकार राना प्रताप भी ;
मातृभूमि हित था लड़ता ॥

(हरिदास माणिक)

२६-राना प्रतापको अकबरने बहुत दुःख दिये पर वीर प्रताप ने मातृभूमिके कारण सब दुःख सहर्ष सह लिये । पृथ्वीराजकी कन्याके आदर्श स्वरूप काम और आत्मत्यागका अब भी राजपूताने और अन्य देशोंमें गान होता है। उसकी विमल कीर्तिको अब भी राजपूत रमणियां, जांता पीसते समय हँसी खुशी खेल कूद में गाया करती हैं। धन्य है वह देश जहांके ऐसे वीर पुरुष औ रमणियोंने जन्म लिया था ।

॥ समाप्त ॥

